चिकित्सा के प्रति समाज-सांस्कृतिक उपागम

डॉ. रामनारायण एवं डॉ. रञ्जन कुमार
प्रवक्ता, पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी...

चिकित्सा अथवा उपचार का उद्देश्य संबंधित व्यक्ति के अपानुकूलक व्यवहार में ऐसा परिवर्तन अथवा सुधार लाना होता है, जिससे उसका व्यवहार स्वीकार्य तथा सामान्य स्थिति में आ सके। चूंकि अपानुकूलक व्यवहार के अनेक रूप तथा विविध कारण होते हैं, अत: उनके कुशल व सफल उपचार की भी प्राय: अलग-अलग ही पद्धतियाँ होती हैं।

वास्तव में प्राचीन युग से ही अपानुकूलक व्यवहार के सुधार के लिए कुछ अपने ढंग का उपचार अवश्य ही किया जाता रहा है। पाषाण युग में इसके उपचार के लिए संबंधित रोगी के सिर में एक सूराख (Trephine) ही बना दिया जाता था, जिससे कि उसके शरीर में घुसी हुई व्याधिजनक व दुष्ट आत्मा उसके शरीर को छोड़कर कहीं और चली जाए। मध्यकालीन युग में भी इस संबंध में जादू-टोना व झाड़-फूँक आदि के अतिरिक्त, ऐसे व्यक्ति के प्रति प्राय: अति क्रूरता के व्यवहार का भी प्रचलन रहा, परंतु आधुनिक वैज्ञानिक युग में इस दिशा में निश्चित रूप से अपार प्रगति हुई है और अब अपानुकूलक व्यवहार की यथार्थ हेतुकी (Etiology) के अध्ययन के संदर्भ में अनेक अचूक उपचारात्मक पद्धतियाँ विकसित हुई हैं तथा निरंतर विकसित होती जा रही हैं।

एक रोगी की चिकित्सा के प्रति समाज-सांस्कृतिक चिकित्सा के विभिन्न रूप होते हैं तथा ये रूप लगभग एक समस्या-बालक के लिए प्रतिपालक गृह (Foster home) से लेकर अन्य सामाजिक मूल संस्थाओं में आवश्यक संशोधन तथा उनमें आमूल परिवर्तन लाने तक विस्तृत हैं। इसका मुख्य कारण यही है कि कभी-कभी एक विकृति की उत्पत्ति में संबंधित व्यक्तित्व की निर्बलता अथवा संवेदनशीलता की भूमिका न होकर इसके विशेष विकृतिजन्य समाज-सांस्कृतिक पर्यावरण की ही विशिष्ट भूमिका रहती है।

समाज-सांस्कृतिक उपागम के प्रति नव फ्रायडवादियों की भूमिका - कुछ मनोविज्ञानियों विशेषत: नवफ्रायडवादियों- जैसे कैरन हार्नी, फ्राम, माडीनर व अलेक्जेंडर आदि का यह अभिन्न मत रहा है कि आधुनिक पाश्चात्य सामाजिक जीवन का जैसा वर्तमान स्वरूप है, उसके अंतर्गत व्यक्ति में मूलभूत दुश्चिन्ता (Basic Anxiety) का उत्पन्न होते रहना, एक प्रकार से अपरिहार्य ही है, क्योंकि यह सामाजिक व्यवस्था एक ऐसी आर्थिक व्यवस्था का अभिन्न अंग है, जिससे जनसाधारण को निरंतर संघर्षरत व स्पर्धारत रहना पड़ता है व जिसमें उसे थोड़े-थोड़े समय पर ही बेरोजगारी, भुखमरी, सामाजिक अत्याचार सार्वजनिक जीवन में निरंतर बढ़ते घोर भ्रष्टाचार, अपार आर्थिक संकट व शोषण का असहाय शिकार बनते रहना पड़ता है।

पूँजीवादी व्यवस्था में भ्रष्टाचार तथा मनोविकार-स्पष्टत: ऐसी व्यवस्था में जमाखोरी, घूसखोरी, चोरबाजारी, तस्करी, भिक्षावृत्ति, वेश्यावृत्ति, मद्यव्यसन तथा अपराध प्रवृत्ति में भी निरंतर वृद्धि ही होती जाती है और व्यक्ति अनेक मानसिक संघर्षों, ग्रंथियों व व्याधियों के अदृश्य जाल में सहज रूप में ही फँसता जा रहा है। अत: व्यक्ति की ऐसी घोर अंधकारमय समाज-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के संदर्भ में ही एक तर्कसंगत प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि क्या ऐसी समाज-सांस्कृतिक व्यवस्था की स्थिति जनसाधारण के लिए अपरिहार्य ही है और क्या इसका कोई अन्य स्वीकार्य तथा व्यावहारिक विकल्प संभव नहीं है।

पूंजीमूलक (Capitalistic) अर्थव्यवस्था तथा मूल दुश्चिन्ता (Basic Anxiety) - यहाँ इस संबंध में एक तथ्य सामान्यत: अनुभव होने लगा है कि वर्तमान पूँजीवादी व्यवस्था तथा इस पर आधारित राजनीतिक व समाज-सांस्कृतिक संरचना ही ऐसी है, जिसमें साधारणत: निर्धन व धनी व्यक्ति को भी नित आधारभूत दुश्चिन्ता मानसिक कुण्ठा, विरोध, अवसाद तथा विषाद से ग्रस्त रहने के लिए विवश रहना पड़ता है व जिसमें राजनीतिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भ्रष्टाचार, सामाजिक अत्याचार व मानसिक विकार एक प्रकार से अपरिहार्य ही हैं तथा जिसमें मानव समाज के अधिकांश भाग को, अपरिहार्य रूप से गरीबी, महँगाई, भुखमरी, बीमारी, अभाव, मिथ्या अकाल व काल की निरंतर काली छाया में रहने को ही विवश रहना पड़ता है। अतः इस संबंध में यहाँ तर्कसंगत रूप से यह प्रश्न उठता है कि क्या इस आदिमकालिक समाज सांस्कृतिक व्यवस्था की निजी सम्पत्ति जैसी अति जर्जर व भ्रष्टाचारजन्य सामाजिक संस्था के उन्मूलन, अथवा इसमें गंभीर संशोधन की आवश्यकता नहीं है? इस संबंध में यहाँ यह भी देखा जाना आवश्यक है कि मानवसमाज में मानव के मूल अधिकारों के दमन व शोषण तथा सामाजिक अत्याचार व भ्रष्टाचार के लिए राजनीतिक स्तर पर सामान्यवाद व उपनिवेशवाद कहाँ तक उत्तरदायी हैं?

निजी सम्पत्ति की प्रचीन संस्था में व्यापक परिवर्तन की आवश्यकता--

वस्तुतः स्थायी मानसिक चिकित्सा व मानसिक स्वास्थ्य के लिए वर्तमान पूँजीवादी व्यवस्था पर आधारित प्रत्येक राष्ट्र को अपनी ऐतिहासिक व राजनीतिक पृष्ठभूमि में भारी परिवर्तन अथवा आमूल परिवर्तन की आवश्यकता जान पड़ती है, क्योंकि व्यापक रूप से संसार में एक प्रकार से मूलदुश्चिन्ता की कुण्ठाकारक व विकासजन्य स्थिति समाजवादी व्यवस्था वाले राष्ट्रों में प्रायः देखने को नहीं मिलती। निश्चिततः यहाँ इस कथन का यह उद्देश्य कदापि नहीं है कि वर्तमान लोकतांत्रिक व पूँजीवादी व्यवस्था के स्थान पर समाजवादी व्यवस्था का अंधा अनुकरण किया जाए, परंतु यहाँ यह समझना है कि पूँजीवादी समाजों की वर्तमान सामाजिक व्यवस्था ही अनेक मानसिक व्याधियों की जननी है, क्योंकि इसके अंतर्गत अनेक निजी सम्पत्ति व विशेषाधिकारों जैसी लगभग आदिकाल की संस्थाओं को जो कि इस आधुनिक युग में अपनी जर्जर अवस्था में पहुँच गई हैं, इस युग में उन्हें स्थिर रखना, सामाजिक न्याय की दृष्टि से कहाँ तक उचित व न्यायसंगत है। स्पष्टतः इसमें व्यापक स्तर पर आमूल परिवर्तन की ऐतिहासिक आवश्यकता है व इसमें व्यापक परिवर्तन लाने से ही मानव समाज अनेक भ्रष्ट विचारों, मिथ्या विश्वासों, भ्रामक लालसाओं व दूषित तथा विकारजन्य प्रभावों से मुक्त हो सकता है।

चिकित्सा एवं ध्यानयोग

(i) भावातीत ध्यान (Transcendental Meditation)

तनाव मुक्ति (Tension-reduction or relaxation) की यह एक ऐसी महत्त्वपूर्ण विधि है, जिसके अंतर्गत व्यक्ति एक ऐसी सीधी परंतु शिथिल ध्यानआसन की स्थिति में बैठा होता है, जिसमें संबंधित व्यक्ति के मन (अथवा मस्तिष्क के चिंतन संबंधी केन्द्रों) पर न तो किसी प्रकार का भार रहता है और न तनावशील नियंत्रण ही रहता है। वस्तुतः यह ध्यान (Meditation) की ऐसी शारीरिक व मानसिक स्थिति होती है, जिसमें व्यक्ति का तंत्रिका-तंत्र व्यावहारिकतः शिथिल तथा निष्क्रिय ही बना रहता है, परंतु इस प्रक्रम में वह प्रायः एक मंत्र का अपने मन में कुछ उच्चारण व जाप अवश्य करते रहता है।

इस भावातीत ध्यान की स्थिति के सुबह व शाम के अभ्यास से एक तनावग्रस्त व्यक्ति कुछ ही दिनों में अपने मानसिक तनाव से मुक्त होते देखा जाता है। वस्तुतः भावातीत ध्यान की स्थिति में व्यक्ति की विचार की गति, श्वास की गति व नाड़ी की गति भी एकदम शिथिल पड़ जाती है। इस स्थिति में व्यक्ति को पसीना भी कम ही आता है, जो कि प्रायः शारीरिक दृष्टि से, इस सत्य की ओर संकेत करता है कि व्यक्ति इस स्थिति में पूर्णतः विश्रामदायक व शांतिदायक मुद्रा में है। वस्तुतः भावातीत ध्यान की ऐसी स्थिति के निरंतर अभ्यास से एक व्यक्ति अपने उत्तेजनशीलता, आक्रामकता, विरोध, अवसाद व उन्माद आदि भावों से कुछ ही समय पश्चात् मुक्त होते देखा जाता है।

तनावमुक्ति की इस पद्धति के प्रतिपादक महर्षि महेश योगी हैं। आधुनिक काल में यह पद्धति न केवल भारतवर्ष में, बल्कि विदेशों के अनेक बड़े नगरों जैसे लॉस एंजिल्स, कनाडा, साउथ अफ्रीका आदि में भी अधिक उपयोगी सिद्ध हुई है तथा इस कारण इसके प्रचलन में नित्य वृद्धि होती जा रही है।

(ii) योग चिकित्सा (Yoga Therapy)- मूलरूप से इस चिकित्सा पद्धति के प्रतिपादक महर्षि पतञ्जलि है, जिन्होंने लगभग ईसा से ४०० वर्ष पूर्व इसका सूत्रपात किया था। इस चिकित्सा-पद्धति की मूल अवधारणा यह है कि जब तक व्यक्ति का मन व व्यवहार उसके पर्यावरण के प्रभाव के कारण दूषित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होता रहता है, तभी तक उसमें मानसिक विकृति उत्पन्न होते देखी जाती है। इसके विपरीत यदि एक व्यक्ति अपनी स्वाभाविक प्रवृत्तियों के अनुकूल व अनुरूप ही निरंतर व्यवहार करने का अभ्यास करता रहता है, तब इससे न केवल उसका इष्टतम विकास ही संभव होता है, बल्कि वह विकृतिजन्य पर्यावरणगत दुष्प्रभावों से भी एक प्रकार से मुक्त रहता है। मानवतावादी तथा अस्तिपरकवादी विचारधाराओं के अनुरूप यह दार्शनिक विचार पद्धति भी, मानव के मानसिक स्वास्थ्य व व्यक्तित्व-विकास के लिए उसकी क्षमताओं व जन्मजात विभवों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति व विकास पर ही बल देती है।

महर्षि पतञ्जलि ने इस स्थिति की प्राप्ति को व्यवहारिकत: कठिन ही बताया है, परंतु साथ ही साथ उनका यह भी कहना है कि व्यक्ति इस चिरमय सुखद स्थिति को वर्षों से नियंत्रण व अभ्यास (अथवा योग) से अवश्य प्राप्त कर सकता है। इस प्रक्रम में उसे अपने आपको बाह्य पर्यावरण के दुष्प्रभावों से अधिकांशत: प्रभावित होने से बचाव करने का सतत् अभ्यास करना होता है व अपने संवेगों तथा विचारों की प्रक्रियाओं पर भी आवश्यक नियंत्रण स्थापित करना सीखना होता है।

पतञ्जलि योग-चिकित्सा के अंतर्गत वस्तुत: व्यक्ति को यम, नियम, संयम, प्राणायाम, अहिंसा, शुद्धता, संतोष, स्वाध्याय, ध्यान, आसन, प्रत्याहार व समाधि आदि का अटूट अभ्यास करना होता है। ऐसे मानसिक गुणों के अभ्यास द्वारा व्यक्ति न केवल विभिन्न शारीरिक क्रियाओं को ही आवश्यक रूप से नियमित कर सकता है, बल्कि वह इनसे अनेक मनोकायिक विकारों पर नियंत्रण भी स्थापित कर सकता है। कुछ वैज्ञानिक अध्ययनों जैसे Vahia 1069 व Naug 1975 के आधार पर योग -चिकित्सा पद्धति से दुश्चिन्ताग्रस्त हिस्टीरिया व मनोकायिक विकारों से पीड़ित तथा अवसादी जैसी स्थिति से पीड़ित व्यक्तियों को विशेष रूप से लाभ पहुँचते देखा गया है।

इस प्रकार योग-चिकित्सा पद्धति का व्यापक रूप से शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य पर अत्यधिक लाभप्रद प्रभाव देखने में आया है। इस कारण इसका उपयोग भारत तथा विदेशों में भी व्यापक रूप से अनेक विद्यार्थियों, शिक्षकों व अन्य सामान्य व्यक्तियों में निरंतर बढ़ते देखा जा रहा है।

(iii) मस्तिष्क-विद्युत्लहर चिकित्सा (Brain-Wave Therapy)

विद्युत्लहरों का प्रत्यक्षत: संबंध व्यक्ति के रक्त चाप (Blood Pressure) तथा स्वायत्त से तंत्रिकातंत्र के कार्यों से रहता है तथा विद्युत्-लहरों के विभिन्न रूपों (a, b, y, q) को उनकी विभिन्न गतियों से पहचाना जा सकता है। इसके अतिरिक्त, मस्तिष्क की असामान्य स्थिति में विद्युत लहरों का स्वरूप उसकी सामान्य स्थिति में भी सफलतापूर्वक पहचाना जा सकता है। इसके लिए संबंधित व्यक्ति को जीव-प्रतिपुष्टि प्रशिक्षण (Bio Feedback training-B.F.T.) की आवश्यकता होती है।

इसके पश्चात् संबंधित विद्युत् उपकरण की सहायता से जीव प्रतिपुष्टि सूचना के आधार पर एक व्यक्ति अपने रक्तचाप व स्वायत्त तंत्रिका तंत्र के कार्यों के सामान्य तथा असामान्य रूपों को समझकर उनमें समय-समय पर आवश्यक संशोधन व सुधार भी कर सकता है। इस प्रकार Brain-Wave की लहरों को नियमित व संतुलित किया जा सकता है। यहाँ इस संबंध में Bio-Feed back Traing (B.F.T.) को Electronic Yoga भी कहते हैं, क्योंकि इसके माध्यम से अनेक मनोकायिक विकारों व दुश्चिन्ता के तनावों को कम किया जा सकता है।

(२) जल-चिकित्सा **(Hydro-Therapy)**-जिस रोगी में दीर्घकालिक रूप से उत्तेजित बने रहने की रोगात्मक स्थिति बनी ही रहती है, या फिर जिस रोगी में निरंतर शक्तिहीनता व भावशून्यता तथा ध्यान रिक्तता की घोर निराशाजनक स्थिति बनी ही रहती है, उसे जल चिकित्सा की अनुप्रयुक्ति से अपने रोगजन्य व कुण्ठाकारक लक्षणों से अपेक्षाकृत शीघ्र भारमुक्त होते देखा जाता है। या यों कहा जा सकता है कि साधारणत: स्नान का स्वस्थ व्यक्ति के मन पर भी सुखद प्रभाव पड़ते देखा जाता है, परंतु जब एक रोगी का मन अति अशान्त व उदास होता है, उस स्थिति में बहते पानी में तैरने व नहाने से मन पर और भी अधिक प्रशान्तक व आनन्ददायक प्रभाव देखने में आता है। कुछ समय के लिए (लगभग एक घंटे) ठंडे जल से भरे हुए पानी के टब में स्वेच्छा से नहाते रहने का भी मानसिक रोगी पर स्वास्थ्यवर्धक व शांतिदायक प्रभाव रहता है। कभी-कभी एक अशान्त रोगी के शरीर को ठंडे पानी के बड़े तौलिये में कुछ समय के लिए लपेट देने का भी गहरा संतोषजनक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रभाव रहता है। अतः कुछ साधारण मानसिक रोगियों के लिए जलचिकित्सा भी अति उपयोगी रहती है।

(v) व्यवहार चिकित्सा (Behaviour-Therapy)-- व्यवहार चिकित्सा का मुख्य बल संबंधी रोगी के Maladaptive व्यवहार में प्रायोगिक आधार पर स्थापित अधिगम के नियमों द्वारा ऐसे अनुकूली व्यवहार की दीक्षा आरंभ की जाती है, जिससे उसका पुराना अपानुकूलक (Maladaptive) व्यवहार विधिवत् रूप से निरंतर निर्बल पड़कर समाप्त हो जाता है तथा उसमें नवीन अनुकूली (Adaptive) व्यवहार एवं आदत का रूप सशक्त बनता जाता है। मानसिक रोगों के उपचार में मनोवैज्ञानिकों ने इस पद्धति के अपनाने में पिछले लगभग दो दशकों से अपनी गहरी रुचि दिखाई है। साधारणतः व्यवहार-चिकित्सा को कभी-कभी व्यवहार-संशोधन अथवा व्यवहार-उपान्तरण (Behaviour - Modification) चिकित्सा भी कहा जाता है।

इस चिकित्सा-पद्धति के अंतर्गत Clinician की सैद्धांतिक अवधारणा मूलतः यह रहती है कि एक विशेष रोगी के व्यवहार का आधार पुराना दोषजन्य व्यवहार ही होता है, जो अब उसकी एक खराब आदत बन चुका है। अतः अब उसके उपचार के लिए पूर्व स्थापित उन अधिगम नियमों व सिद्धांतों का सहारा लिया जाना चाहिए, जिससे उसकी पुरानी रोगग्रस्त आदत धीरे-धीरे निर्बल पड़कर छूट जाए तथा उपयुक्त प्रशिक्षण व पुनर्बलन (re-inforcement) द्वारा उसमें ऐसे नवीन व्यवहार व आदत का नवनिर्माण किया जाए जिसे कि उसके लिए एक प्रकार से उसकी सामाजिक व उपचार की दृष्टि से सामान्य तथा स्वस्थ माना जाता है।

इस चिकित्सा-पद्धति में संबंधित रोगी के अचेतन के अभिप्रेरण (Unconscious Motivation) की ओर ध्यान न देकर उसके प्रत्यक्ष स्पष्ट अथवा प्रेक्षणमूलक (observable) व्यवहार पर ही मुख्य बल केन्द्रित रहता है। इस उपचार-प्रक्रम के अंतर्गत Pavlov के अनुबंधन संबंधी अधिगम के सिद्धांत का भी सहारा लिया जाता है तथा आवश्यकतानुसार Skinner के नैमत्तिक (Operant) अनुबंधन के अधिगम सिद्धांत को भी अनुप्रयुक्त किया जाता है। इस उपचार-पद्धति के पोषक J.B. Watson रहे हैं। उन्होंने अपने प्रयोगों के आधार पर Experimental Neurosis को स्थापित करके भी दिखाया तथा उसका उपचार भी प्रत्यक्षतः प्रायोगिक आधार पर अथवा प्रेक्षणमूलक तथ्यों के आधार पर सुस्थापित भी किया।

व्यवहार चिकित्सा और उसका स्वरूप-इस चिकित्सा पद्धति के समर्थकों ने परंपरागत मनोविश्लेषणवादी मनश्चिकित्सा पद्धति का डटकर विरोध किया तथा वैज्ञानिक दृष्टि के संदर्भ में इसके संप्रत्यों को आत्मनिष्ठ रहस्यमयी तथा असत्यापनीय (Unverifiable) ठहराया। Eysenek 1957 ने भी मानसिक रोगियों के उपचार में मनोविश्लेषणवादी उपचार पद्धति की घोर आलोचना की। वस्तुतः व्यवहार-चिकित्सा पद्धति ने अपनी उपचार पद्धति में प्रयोगशाला आधारित अधिगम के नियमों को प्रयुक्त किया तथा कुछ स्थितियों में प्रेक्षणमूलक तथा सत्यापनीय ढंग से अपनी उपचार पद्धति के पक्ष में आवश्यक प्रमाण भी प्रस्तुत किए।

व्यवहार-चिकित्सा का आलोचनात्मक मूल्यांकन-व्यवहारवादी मनोविज्ञानी अपनी उपचार-पद्धति को सरल, स्पष्ट, कुशल तथा वैज्ञानिक कहते हैं। इनके अनुसार मनोरोग का कारण संबंधित व्यक्ति का एक दोषजन्य सीखा हुआ व्यवहार ही होता है, जिसका नए ढंग से सीखने के द्वारा ही निर्मूलन भी किया जा सकता है। परंतु मनोविश्लेषणवादी इस उपचार-पद्धति को केवल यांत्रिक, ऊपरी, अकुशल व अमानवीय रूप से कठोर ही बनाते हैं। इसके अतिरिक्त, इस उपचार-पद्धति द्वारा अधिक गंभीर रूप से पीड़ित जैसे मनस्तापी (Psychotic) व्यक्ति का उपचार नहीं होने पाता। वस्तुतः व्यवहार-चिकित्सा के पोषक रोग के लक्षणों को दूर करने में ही उपचार के लक्ष्य को पूरा मान लेते हैं, जबकि मनोविश्लेषणवादी यह विश्वासपूर्ण ढंग से कहते हैं कि जब तक एक रोगी व्यक्ति के लक्षणों के मूल कारण को ही नहीं पहचाना जाता है, तब तक उसका ठीक ढंग से सफल उपचार भी संभव नहीं होता। अतः मनोविश्लेषणवादी दृष्टिकोण मनोरोग के उपचार में उसके रोग के वास्तविक कारणों को जानने के लिए संबंधित व्यक्तित्व के अचेतन में गहरे धरातल तक पहुँचने का प्रयास करता है। स्पष्टतः समय व धन के अधिक व्यय के कारण इस उपचार-पद्धति का अनुप्रयोग केवल सीमित ही रह जाता है, जबकि व्यवहार-चिकित्सा पद्धति का स्वरूप प्रायः अपने में बोधगम्य व प्रत्यक्ष तथा अपेक्षाकृत सरल रूप से व्यक्ति के व्यवहार को शीघ्र ही आवश्यक मोड़ देने में सक्षम है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भारतीय मनोचिकित्सा : स्वरूप एवं पद्धति

भारतवर्ष की प्राचीन चिकित्सा-पद्धतियाँ के उल्लेख भारतीय संस्कृति के चार मुख्य वेद-ग्रन्थों विशेषत: अथर्ववेद में मिलते हैं। इसमें अनेक मानसिक विकृतियों जैसे, उन्माद, मूर्छा, अपस्मार, तीव्र भय, मानसपाप व पापभावना आदि का भी वर्णन है। इनके अतिरिक्त, इनमें अनेक संवेगात्मक विकृतियों जैसे क्रोध, ईर्ष्या, मोह, काम, शाप व दु:स्वप्न का भी उल्लेख है। इन मानसिक व्याधियों के उपचार के रूप में वेदों में मंत्रविद्या, संकल्प, आत्म संसूचन, संवशीकरण, आश्वासन, उतारण, हवन, ब्रह्म कवच, मंगलकर्म, जप, तप व व्रत आदि पर विशेष बल दिया गया है।

वेद में मनोविकृति का उपचार--

अथर्ववेद में मानसिक व्याधियों से पीड़ित व्यक्तियों को रोग-मुक्त करने की अनेक विधियों व पद्धतियों पर भी अति विस्तृत प्रकाश डाला गया है। एक व्यक्ति को व्याधि-मुक्त करने की ये प्रमुख विधियाँ व पद्धतियाँ इस प्रकार रही हैं, भूतविद्या, मंत्रविद्या, प्रायश्चित्त मंत्रसिद्धि, आत्मसिद्धि, हवन, आसन, नियम, जप, तप, व्रत, पूजा, भय, प्रार्थना, प्राणायाम, ध्यान, ज्ञान, आश्वासन, योग व समाधि आदि।

प्राचीन भारत में मनोविकृत्ति के संबंध में दो रूप अधिकांशत: दृष्टिगोचर रहे हैं, जिनमें एक रूप व्यावहारिकत: असाध्य मनोरोग जैसे मनोविक्षिप्ति का रहा है, तथा जिसका उपचार या तो नहीं रहा है, या फिर उसका उपचार दीर्घकालीन व धार्मिक कर्मकाण्डों की परिधि के ही अंतर्गत रहा है। अधिकांशत: ऐसे रोगी व्यक्ति के घर को छोड़कर बाहर कहीं चले जाने की भी प्रथा रही है। इसके अतिरिक्त उपचार का दूसरा रूप, व्यावहारिकत: ऐसे साध्य मानसिक रोगों का रहा है, जिसके प्रति यही धार्मिक भावना रहती है कि ऐसे व्यक्ति पर किसी भूत की छाया पड़ गई है, या फिर कोई देवी उसके सिर पर आ गई है और वह देवी अपनी तुष्टि के लिए कुछ दान व भेंट आदि माँग रही है। ऐसी स्थितियों में संबंधित व्यक्ति का उपचार सिर पर चढ़े हुए भूत या सिर पर आई हुई देवी का किसी प्रकार से उतारना होता है। इसके लिए ही सयानों (भूतविद्या में जाने माने व्यक्तियों) को बुलाया जाता रहा है, या फिर उनके पास जाकर देवी या भूत के प्रकोप को दूर कराने की प्राचीन युग से प्रथा रही है और इस संबंध में आश्चर्यजनक बात यह रही है कि इस प्रकार के ऊपरी उपचार के पश्चात् संबंधित रोगी अच्छा भी होता हुआ पाया गया है, भले ही यहाँ उसके अच्छा होने का कोई और आधार रहा होगा। जिन मनोरोगियों पर ऐसे उपचार का कोई प्रभाव दृष्टिगोचर नहीं होता था, उन्हें प्राय: अनेक धार्मिक तीर्थों के दर्शन से लाभ उठाने की बात सोची जाती रही है। ऐसा एक प्रसिद्ध धार्मिक तीर्थ स्थान राजस्थान में है, जहाँ पर प्रतिदिन सैकड़ों व्यक्ति आधुनिक मनोवैज्ञानिक भाषा में अपने मानसिक रोगों, विषम जालों अथवा अपने सिर पर भूत के चढ़े होने के प्रकोप या फिर सिर पर आई हुई देवी की कुपित दृष्टि के कष्ट को दूर करने के उद्देश्य से बालाजी के मंदिर दर्शनार्थ आते रहते हैं। यहाँ आने वाले ऐसे व्यक्तियों में इतना अवश्य है कि अधिकांश व्यक्ति देश के ग्रामीण अंचलों से ही आते हैं, परंतु साथ ही साथ बड़े नगरों से उच्च स्तर के शिक्षित व्यक्तियों, मानवशास्त्री शोधकर्ताओं व पत्रकारों आदि की भी यहाँ संख्या कम नहीं रहती है। इसमें भले ही उनका दृष्टिकोण ऐसे स्थान पर आने की जिज्ञासा व सामान्य जानकारी कम ही रहती हो, परंतु वे यहाँ आते अवश्य रहते हैं। अनेकों मानसिक व्याधियों से छुटकारा पाने की मनोकामना से भी आते रहते हैं और उनमें से अनेक व्यक्ति यहाँ पर प्रचलित विभिन्न उपचार-पद्धतियों की विभिन्नताओं की जैसे स्वयं नृत्य करने, बंधनमुक्त रूप से बोलने, गाने व सिर हिलाने के एकदम प्रभावी होने की बात का दावा भी करते देखे गए हैं। इन सब भारतीय उपचार-पद्धतियों में देवी-देवताओं की स्तुति, भक्ति, मंत्रों की शक्ति व भूत-विद्या की आलौकिक शक्ति में ही निहित बताया गया है। अथर्वेद में वर्णित मनोविकृति के प्रति इन विभिन्न चिकित्सा-पद्धतियों की शक्ति का ज्ञान इस तथ्य से पता लगता है कि आधुनिक पाश्चात्य देशों में भी मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से अनुभावातीत ध्यान (Transcendental Meditation) की असाधारण शक्ति को अत्यधिक मान्यता दी जाने लगी है और इन देशों में भी इस प्रकार के ध्यान-केन्द्रों की संख्या में निरंतर वृद्धि होती जा रही है।

नैतिक उपचार (Moral Therapy)--

Pinel, Tuke, Dorothea Dix, Benjamin Rush के महान प्रयासों से मनोविकृतिविज्ञान के विकास को अत्यधिक बल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिला। इससे ही मानसिक रोगियों के प्रति व्यवहार में मानवीय उपागम का प्रसार हुआ और उनके उपचार में निर्दयी व कठोर व्यवहार के स्थान पर नैतिक चिकित्सा (Moral therapy) पद्धति के महत्त्व को समझा जाने लगा। मानसिक रोगियों की नैतिक चिकित्सा का तर्कसंगत आधार अब यह माना जाने लगा है कि मानसिक रोगी, वास्तव में, एक प्रकार से सामान्य व्यक्ति ही होते हैं, परंतु उनका व्यक्तित्व कुछ कारणों से निर्बल व हीन होने के कारण Stress, मनोवैज्ञानिक व कठोर सामाजिक स्थितियों में शीघ्र ही टूट जाता है व छिन्न-भिन्न हो जाता है। अतः मानसिक रूप से ऐसे हताश व निराश रोगियों के नैतिक बल को जागृत व विकसित करने की अधिक मनोवैज्ञानिक आवश्यकता होती है। व्यवहारिक रूप में, नैतिक चिकित्सा पद्धति के फलस्वरूप अनेक रोगियों के जीवन में चमत्कारिक लाभप्रद परिवर्तन देखने में आया है।

मानसिक रोगियों में नैतिक चिकित्सा के लाभकारी प्रभाव को समझकर इस तर्क के आधार पर आगे चलकर सामान्य व्यक्तियों के जीवन में भी मानसिक स्वास्थ्य अभियान का शुभारंभ हुआ। इसके अंतर्गत मनोचिकित्सकों ने मानसिक स्वास्थ्य रक्षा के नियमों की तरफ जन-साधारण का ध्यान केन्द्रित किया और यह बताने का प्रयास किया कि किस प्रकार एक व्यक्ति का व्यक्तित्व अमानुषिक व क्रूर व्यवहार से अस्त-व्यस्त हो जाता है और जीवन में कभी-कभी अत्यधिक मनोवैज्ञानिक भय के कारण वह मनोविकृत भी हो जाता है। इस दिशा में कालीफॉर्ड बियर्स का कार्य विशेषतः उल्लेखनीय व प्रशंसनीय है।

बियर्स येल विश्वविद्यालय के एक ऐसे स्नातक थे, जिन्हें स्वयं एक मानसिक रोगी के रूप में उस समय के तीन विभिन्न मानसिक चिकित्सालयों में अत्यधिक क्रूर व कठोर व्यवहार को सहना व भुगतना पड़ा, परंतु फिर भी जब उन्हें वहाँ एक सेवक का मैत्रीपूर्ण मृदु व्यवहार मिला, तब इसका उनके ऊपर अत्यधिक सुखद व स्वस्थ प्रभाव पड़ा और वे शीघ्र ही अपने आपको स्वस्थ व सामान्य अनुभव करने लगे। बीयर्स ने अपने मानसिक संस्थाओं के कुछ अनुभवों के आधार पर अपनी आत्मकथा A Mind That Found Itselt लिखी और अपने व्यक्तिगत प्रयासों के द्वारा तथा शिक्षित व विचारशील व्यक्तियों का सहयोग प्राप्त किया और मानसिक चिकित्सालयों में अनेक सुधार लाने के लिए उनका ध्यान आकर्षित किया।

सांख्यदर्शन का मनोचिकित्सा का रूप--इस दर्शन के अनुसार, सृष्टि की रचना में दो मूलभूत तत्त्वों का योगदान रहता है, ब्रह्म तथा प्रकृति। ब्रह्म सत् व चित् है तथा प्रकृति माया है। ब्रह्म के रूप में पुरुष व माया के रूप में प्रकृति के मिलन से व्यक्ति की रचना होती है।

ब्रह्म का स्वरूप सत् व चित् होने के कारण स्थायी है, परंतु माया का स्वरूप अस्थायी अथवा चंचल है। इस दर्शन के अनुसार व्यक्ति के रूप में जब तक ब्रह्म, प्रकृति अथवा माया - लीन बना रहता है, तब तक व्यक्ति दुःखी ही रहता है। अतः व्यक्ति की दुःख से मुक्ति तभी संभव है, जब पुरुष की प्रकृति अथवा माया के लुभाने वाले स्वरूप से मुक्ति हो। अतः महर्षि कपिल ने, जो कि सांख्यदर्शन के रचियता हैं, ज्ञान के माध्यम से व्यक्ति को माया के लुभाने वाले छल व कपटी तथा क्षणिक रंगभरे रूप से अपने को मुक्त करने के लिए कहा है, जिससे वह प्रकृति (माया) के कारण उत्पन्न दुःखों तथा विकारों से छुटकारा पा सके।

बौद्ध दर्शन का मनोचिकित्सा के प्रति दृष्टिकोण-

बौद्ध-दर्शन के अनुसार संसार में दुःख है, दुःख का कारण है तथा उसका निवारण भी है। इस दर्शन के महान रचयिता गौतम बुद्ध के अनुसार, संसार में दुःख के मूल कारण, व्यक्ति के स्वयं अपने राग, द्वेष और मोह हैं। इनके प्रभाव के कारण, जीवन में व्यक्ति अथक प्रयास करके पद, धन, सम्पत्ति व प्रतिष्ठा की प्राप्ति के लिए नित लालायित ही रहता है। परंतु इतना कुछ प्राप्त कर लेने पर भी जीवन में प्रायः उसे शांति की प्राप्ति नहीं होती। इस दर्शन के अनुसार, व्यक्ति के जीवन में स्थायी सुख व शांति की स्थिति केवल निर्वाण (Nirvana) से ही प्राप्त होती है, जिसका आधार सच्ची साधना होती है। प्राचीन भारतवर्ष में उपचार-पद्धतियों के सूक्ष्म व सीमित उल्लेख के साथ-साथ यहां सांख्य-दर्शन, योग-दर्शन व बौद्ध-दर्शन के उपचार का वर्णन यहाँ केवल सन्दर्भ रूप में ही किया गया है तथा इनके प्रस्तुतीकरण का उद्देश्य यहाँ यह स्पष्ट करना भी है कि इनका लक्ष्य तथा बल विशेषतः मानव का एक इकाई के रूप में ही उपचार पर रहा है। इनमें, व्यापक रूप से, व्यक्ति के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवन से सम्बन्धित सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक पक्षों की ओर अधिक ध्यान नहीं दिया गया है। अतः इस संबंध में यहाँ आधुनिक युग में व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से तथा सैद्धान्तिक रूप से समाजवादी व आत्म-निर्भरता पर आधारित समाजवादी दृष्टिकोणों का कुछ संक्षिप्त उल्लेख भी अति तर्क संगत तथा न्यायसंगत जान पड़ता है।

समाजवादी उपागम (Socialistic Approach) -

समाजवादी उपागम, समाज के स्तर पर व्यक्ति के कल्याण के मार्ग की खोज करता है। समाजवादी दार्शिनिक दृष्टिकोण वस्तुतः ऐसी सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक व्यवस्था पर बल देता है, जिसमें आर्थिक व राजनैतिक सत्ता खेतिहर व औद्योगिक मजदूरों, कुशल कर्मचारियों व प्रौद्योगिक विदों (Technologists) के हाथों में संचित व केन्द्रित होता है, क्योंकि वे ही समाज में उत्पादन के वास्तविक स्त्रोत व साधन है तथा उनके ही माध्यम से एक समाज व राष्ट्र की इष्टतम आर्थिक प्रगति सम्भव है और राजनैतिक सत्ता के भी उनके हाथों में होने से, उत्पादन के मार्ग में न किसी शोषण का भाव ही श्रमिकों के मन में रहता है और न उनको पूँजीवादी-व्यवस्था में व्याप्त औद्योगिक तालाबंदी व किसी अन्य विघ्न काही भय छाया रहता है।

सैद्धान्तिक रूप से ऐसी समाज वादी व्यवस्था में एक समाज के मेहनतकश व्यक्ति तन-मन से अपने उत्पादन का कार्य सम्पन्न करते देखे जाते हैं तथा इस प्रक्रम में उनमें स्वाभाविकतः धीरे-धीरे पर्याप्त सामाजिक चेतना व अपने सम्बन्धित उत्तरदायित्व की भावना भी विकसित होते देखी जाती है, और इससे आगे चलकर, सम्बन्धित समाज में एक ऐसी स्थिति आ जाती है, जिसमें लगभग समस्त सदस्य अपने दायित्व के भाव को पूर्णरूप से समझने लगते हैं।

मूलरूप से, इस दृष्टिकोण के संस्थापक कार्ल मार्क्स हैं तथा इसके मुख्य पोषक लेनिन रहे हैं। स्पष्टतः इस उपागम के कारण विश्व के समाजवादी देशों में पिछले छः या सात दशकों में अपार आर्थिक व सामाजिक प्रगति देखने में आयी है भले ही, इस उपागम को कार्यरूप देने में प्रारम्भ में कुछ कठिनाइयाँ रही हों, परन्तु इस समय इसके कुछ चमत्कारी परिणाम समाजवादी देशों की अपार आर्थिक व सामाजिक प्रगति में अवश्य देखने को मिल रहे हैं, जिनमें कम से कम, व्यापक स्तर पर, जन साधारण बेकारी, भुखमरी, बीमारी, सामाजिक अत्याचार व राजनैतिक भ्रष्टाचार से अवश्य मुक्त रहते देखने में आ रहे हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

THERAPY → *Treatment; application of various treatment*

- **I. Medical Therapy** (Biological therapy)
  - Psycho - Surgery or Brain Surgery
  - Insulin Coma therapy
  - E.C.T. or Electro Shock Therapy
  - Drug Therapy
  - Brain wave therapy
  - Electro sleep therapy
  - Vitamine therapy
  - Hydro therapy
  - Rest - therapy
  - Heat therapy
  - Color therapy
  - Massage therapy
  - Acupressure Therapy
  - Radio Therapy
- **II. Psychological Therapy** Psycho Therapy
  - Directtive Therapy
    - Expressive Therapies
      - Psychoanalysis Therapy
      - Hypno - Therapy
      - Music - Therapy
      - Painting - Therapy
      - Occupational Therapy
      - Social Participation Therapy
      - Audio - Visual Therapy
      - Psychodrama Therapy
      - Biblio Therapy
      - Rational Therapy
    - Peruasive Therapies
      - Existential Therapy
      - Humanistic Therapy
      - Gestalt Therapy
      - Behaviour Therapy
      - Play Therapy
    - Repressive
  - Non-Directive Therapy or Client - Centraed Therapy
- **III. Socio-Cultural Therapy**
  - Yoga Therapy
  - Stone Therapy
  - Planet - Therapy
  - Raykee Therapy

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org